ISSN 2395-051X

पर्यावरण प्रदूषण, पर्यावरण अवनयन की अंतिम सीमा : एक अध्ययन

सुप्रिया यादव

अतिथि विद्वान - वाणिज्य

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर, उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश -

मनुष्य के क्रियाकलापों द्वारा पर्यावरण के संघटकों की आधारभूत संरचना में प्रतिकूल परिवर्तनों के कारण पर्यावरण की गुणवत्ता में इस सीमा तक ह्रास होना कि इन प्रतिकूल परिवर्तनों का जैविक समुदाय तथा मानव समाज पर गहरा प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगता है पर्यावरण अवनयन कहलाता है, पर्यावरण अवनयन के कारण पारिस्थितिक तंत्र एवं पारिस्थितिकी की विविधता में कमी होने से पारिस्थितिकीय एवं पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। बढ़ते औद्योगीकरण और आधुनिक जीवन-शैली के चलते पूरी धरती का संतुलन बिगड़ रहा है। प्रदूषण आज पूरी पृथ्वी के लिए एक बड़ी समस्या बन चुका है। दुनिया के तमाम देश प्रदूषण की समस्या से जूझ रहे हैं। मानवीय गतिविधियों और तकनीकी उपकरणों के अत्याधिक उपयोग के कारण आजकल वायु अत्याधिक प्रदूषित हो गई है। पिछली डेढ़ सदी में हमने तरक्की कि जो मिसाल कायम की है, वह सब कुछ पर्यावरण की कुर्बानी देकर हासिल हुआ है। नतीजा सामने है, हवा, पानी, ज़मीन और जंगल को लेकर हर कहीं चिंता पैदा हो गई है। हालांकि आबोहवा में तब्दीली हमें महसूस तो पचास साल पहले ही होने लगी थी, लेकिन उसे लगातार नजर अंदाज करने का नतीजा यह है कि धरती खतरनाक स्थिति में पहुँच चुकी है। गर्मी, बारिश, सूखा, बाढ़, ठंड के बेवक्त और जबरदस्त प्रकोप से डगमगाए संतुलन ने घबराहट पैदा कर दी है। अब जब थोड़ा चेते हैं, तो रस्म अदायगी के सम्मेलनों की बाढ़ सी आ गई हैं। मगर जो हाल है और जैसा चल रहा है अगर वैसा ही चलता रहा तो जलवायु परिवर्तन पर होने वाले तमाम सम्मेलन और दूसरी गतिविधियाँ कहीं महज उत्सव बन कर न रह जाएँ।

मुख्य शब्द - पर्यावरण, प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधन, प्रौद्योगिकीय।

पर्यावरणीय समस्याओं एवं पर्यावरण अवनयन के कारण - पर्यावरण अवनयन तथा उससे जनित विश्वव्यापी पर्यावरणीय संकट का सर्वप्रथम कारण है मनुष्य तथा प्राकृतिक पर्यावरण के बीच तेजी से बिगड़ता संबंध। वास्तव में प्राकृतिक संसाधनों के तेजी से विदोहन, प्रौद्योगिकीय प्रगति एवं औद्योगिक एवं नगरीय विस्तार के कारण प्राकृतिक पर्यावरण एवं उसके पारिस्थितिकीय स्वरूप पर दूरगामी प्रतिकूल प्रभाव पड़े हैं।

मनुष्य के कार्यो द्वारा पर्यावरण में तेजी से हो रहे परिवर्तनों तथा उनसे जनित पर्यावरण अवनयन के भयावह रूप को देखते हुए R.F. Dasmann (1976) ने कहा है, कि ''मानव दौड़ हाथ में ग्रेनेड लिए बन्दर के समान है। कोई यह नहीं जानता कि वह कब ग्रेनेड से पिन खींच लेगा तथा विश्व तहस-नहस हो जायेगा।'' J. Poelmans - Kirschen (1974) ने पर्यावरण अवनयन तथा उससे उत्पन्न विश्वस्तरीय पर्यावरण संकट के लिए निम्न कारणों का अभिनिर्धारण किया है :

1. उत्पादन विभव में तेजी से वृद्धि।
2. वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय खोज तथा विकास में तीव्र वृद्धि।
3. विश्व जनसंख्या में गुणोत्तर वृद्धि।

सामान्य तौर पर पर्यावरण अवनयन तथा उससे जनित पर्यावरणीय समस्याओं एवं पर्यावरण संकट के निम्न कारण है :

- ⇨ मानव जनसंख्या में गुणोत्तर वृद्धि,
- ⇨ तीव्र गति से वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय विकास,
- ⇨ तीव्र गति से विकास के लिए महत्वाकांक्षी विकासीय योजनाओं एवं कार्यक्रमों का नियमन एवं क्रियान्वयन,
- ⇨ औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं कृषि विकास में तेजी से वृद्धि,
- ⇨ समाज के दार्शनिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण,
- ⇨ मनुष्य का प्राकृतिक पर्यावरण एवं प्रकृति के प्रति शत्रुतापूर्ण निर्दयी व्यवहार,
- ⇨ निर्धनता
- ⇨ कुछ देशों में कुछ वर्गो में आवश्यकता से अधिक समृद्धि, अर्थात् असमान आर्थिक विकास
- ⇨ प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण एवं लोलुपतापूर्ण विदोहन।
- ⇨ जनसाधारण में पर्यावरण बोध तथा पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति जागरूकता एवं जानकारी की कमी आदि।

आज वैश्विक स्तर पर पर्यावरण के संकट ने विकराल स्वरूप धारण कर लिया है। इसके परिणामस्वरूप सारा प्राकृतिक चक्र विगड़ गया है। किसी भी समय वारिश, आँधी, तूफान, सुनामी, भूकंप आदि की संभावनाएँ वनी रहती हैं। इसके कारण आपदा प्रवंधन सरकार का स्थाई कार्य वन गया है। वीमारियाँ वढ़ रही हैं, तनाव वढ़ रहा है। मनुष्य ने अपनी सुख, सुविधा के लिए प्रकृति का शोषण किया, उसी कारण से प्राकृतिक चक्र विगड़ गया और वह मनुष्य के दुःख का कारण वन रहा है। भारतीय मनीषियों ने कहा है कि सुख और दुःख एक सिक्के के दो पहलू हैं यह व्यवहार में सिद्ध हो रहा है।

पर्यावरण का शाव्दिक अर्थ है परिआवरण अर्थात् हमारे चारों ओर का वातावरण प्राकृतिक जगत जिसमें भूमि, जल, अग्नि, आकाश, वायु, जीव-जन्तु, जंगल का शोषण करके खिलवाड़ किया जिसके

परिणामस्वरूप गर्मी बढ़ रही है, तापमान 1 प्रतिशत बढ़ने से समुद्र का जल भी 1 मीटर बढ़ेगा, जिससे कई छोटे देश एवं समंदर किनारे के इलाके, बस्तियों पर एक नया संकट उत्पन्न हो सकता है। सौंदर्य प्रसाधनों के बढ़ते उपयोग के कारण 130 से अधिक प्रजातियाँ नष्ट हो गई हैं। भारत में वर्ष 2007 की तुलना में वर्ष 2017 तक भू-जल में 61 प्रतिशत की कमी आयी है। इसी प्रकार इ-वेस्ट का एक नया संकट दुनिया के समक्ष खड़ा हुआ है। भारत में 2007 की तुलना में 2020 में मात्र संगणक (कम्प्यूटर) का कूड़ा (वेस्ट) पाँच सौ प्रतिशत बढ़ गया है। हर वर्ष हम 80 लाख टन कूड़ा-कचरा समुद्र में डालते हैं, जिसके परिणामस्वरूप समुद्र में रहने वाले जलचर का अस्तित्व संकट में है।

विकास के नाम पर वनों की कटाई अंधा-धुंध हो रही है। देश में 33 प्रतिशत वन प्रदेश होना चाहिए। परंतु सरकार के आँकड़ों के अनुसार 22 प्रतिशत वन प्रदेश हैं। हमने प्राकृतिक जगत के खिलवाड़ में आकाश को भी नहीं छोड़ा है। वर्ष 2018 तक विभिन्न देशों के द्वारा कुल 4857 उपग्रह छोड़े गए थे उसमें से 2600 से कम कार्यरत् हैं, बाकी उपग्रहों का कचरा (वेस्ट) आकाश में तैर रहा है। इस सब के परिणामस्वरूप विश्व में हर वर्ष 90 लाख लोगों की मृत्यु इस पर्यावरण प्रदूषण के कारण हो रही है। विश्व की जनसंख्या आरंभ में कम थी। पर्यावरणीय प्रभाव कम थे तथा विश्व में अमन चैन की जीविका लोग व्यतीत करते थे। धीरे-धीरे जनसंख्या बढ़ी तथा समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु बाजारों का प्रादुर्भाव हुआ। औद्योगिक क्रांति आई और आर्थिक परिदृश्य बदला तथा इसके साथ-साथ पर्यावरण में परिवर्तन आये। बाजारों में भी तरह-तरह के परिवर्तन आये। आज की स्थिति ऐसी है कि प्रदूषण भी बाजारों में बिकने लगा है। प्रदूषित वस्तुएँ यदि रीसाइकिल कर दी जायें तो बहुत कुछ पर्यावरणीय संकट हल हो सकता है अतः वर्तमान बाजार में वह वस्तुएँ भी बिक रही हैं जो पर्यावरणीय विषैले पदार्थों का क्रय-विक्रय करके नई वस्तुओं का निर्माण कर रहे हैं। यह एक प्रकार की बाजार की उपलब्धि है कि बाजार में प्रदूषण फैलाने वाली वस्तुएँ भी आर्थिक महत्व की होती जा रही हैं। इस प्रकार बाजारों के तरीके परिस्थितियों पर ही मूलतः निर्भर होते हैं।

पर्यावरण में किसी प्रदूषक द्वारा फैलाये जाने वाले प्रदूषण की मात्रा का निर्धारित शुल्क, पर्यावरण जुर्माना कहलाता है। इसका एक मापक होता है, उससे अधिक प्रदूषण फैलाने का जुर्माना लगता है। प्राकृतिक संसाधनों के बदले या एकत्रित करने या प्रदूषकों के नष्ट करने के बदले में लिया जाने वाला शुल्क प्रदूषण जुर्माना कहलाता है। उत्पाद शुल्क उस पर लगता है जिस वस्तु या उत्पाद के बारे में यह ज्ञात हो, कि यह वस्तु पर्यावरणीय दृष्टि से हानिकारक है। प्रदूषकों का एकत्रीकरण हो या विनिष्टीकरण दोनों पर जुर्माना लगता है। इस प्रकार का शुल्क सामान्य राजस्व का भाग होता है। प्रदूषण शुल्क निम्न गतिविधियों पर वसूल किया जाता है जैसे - आपके द्वारा कितनी मात्रा में प्रदूषक पर्यावरण में छोड़े जा रहे हैं। उसके अनुसार आपसे शुल्क लिया जायेगा, जैसे - ठोस उत्सर्जनों को नष्ट करने का शुल्क इत्यादि।

कई प्रकार के शुल्क उत्पादों पर वसूले जाते हैं। जो सामूहिक रूप से भी एकत्रित किये जाते हैं या व्यक्तिगत रूप से भी वसूले जाते हैं। संघीय तौर पर वायु, जल प्रदूषण के शुल्क वसूले जाते हैं परंतु राज्य स्तर

पर भी सरकारों द्वारा यह निर्धारित करने पर लगाए जाते हैं कि अमुक गतिविधि पर्यावरण विरोधी है। राज्य स्वतंत्र है कि किस प्रकार की गतिविधि पर कर/जुर्माना लेना है जुर्माना पद्धति से प्रदूषण की गतिविधि कम होती है। यह जुर्माना किसी भी रूप में हो सकता है चाहे वह कर हो या शुल्क हो। प्रदूषक की मात्रा पर यह कर या जुर्माना या शुल्क निर्धारित किया जाता है। प्रदूषण नियंत्रण हेतु और भी कई कानून समय एवं परिस्थितियों के अनुसार बनते रहते हैं, जिनसे पर्यावरण को नष्ट करने या क्षति पहुँचाने वाले को विभिन्न प्रकार के दंड देने के प्रावधान है, जैसे - धारा 41 में जल स्त्रोतों से पानी लेने पर दण्ड का प्रावधान है। धारा 43 नदी एवं कुएँ की प्रदूषित सामग्री के उपयोग पर रोक लगाती है। इसमें 6 माह से 6 वर्ष तक की कैद का प्रावधान है। इसी प्रकार धारा 44 गंदा पानी बाहर फेंकने पर रोक लगाती है एवं उस पर दंड की भागीदारी तय होती है तथा धारा 45 में इस बात का प्रावधान है कि यदि ऊपर वर्णित नियमों के विपरीत पुनः दोषी माना जाता है तो उसे आर्थिक दंड के साथ 1 से 7 वर्ष तक की कैद का प्रावधान है। धारा 46 में पुनः उल्लंघन करने पर उसके अपराध का प्रचार-प्रसार किया जाएगा।

निष्कर्ष - उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है, कि पर्यावरण अवनयन के लिए जिम्मेदार प्रक्रमों एवं कारणों से भावी जीवन के प्रति निराशा जाग्रत होती है तथा यह भी आभास होता है, कि सभी विकासीय कार्य प्रकृति तथा पर्यावरण के विपरीत हैं। ज्ञातव्य है कि यदि हमें वर्तमान समाज को विकसित करना है तथा बढ़ती जनसंख्या की माँगों को पूरा करना है तो विकास की गति को बनाये रखना होगा परंतु विकास कार्य पर्यावरण एवं मानव समुदाय के अस्तित्व की कीमत पर नहीं किया जाना चाहिए विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हो रहा है क्योंकि किसी भी देश की अर्थव्यवस्था प्राकृतिक संसाधनों की माँग तथा उसकी गुणवत्ता पर आधारित होती है। वनों से ईधन, मिट्टी से कृषि उपजें प्राप्त होती हैं। आर्थिक लाभ की अन्य वस्तुएँ भी वनों से प्राप्त होती है जैसे - गोंद, अचार की चिरौंजी, हर्र-बहेड़ा, आँवला, शहद आदि आर्थिक महत्व की वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। कच्चे माल के रूप में भूगर्भ से अनेक प्रकार के खनिज प्राप्त होते हैं जो अर्थव्यवस्था को प्रभावित करते हैं। आर्थिक दृष्टि से देखें तो प्राकृतिक संसाधनों का विशेष महत्व है। मनुष्य एवं प्रकृति में एक अटूट रिश्ता है। यदि हम अपनी विलासिता को कम कर दें, वस्तुओं के उपभोग की प्रवृत्ति पर अंकुश लगा दें तो निश्चित ही पर्यावरणीय समस्याओं का आर्थिक हल स्वमेव हो जायेगा। आर्थिक लोलुपता यदि रूक जाती है तो पर्यावरण की अनेक समस्याएँ हल हो सकती हैं।

सन्दर्भ -

1. सिंह, डॉ. सविन्द्र; पर्यावरण भूगोल का स्वरूप, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 2016
2. भट्ट, डॉ. प्रभा; पर्यावरणीय अर्थशास्त्र, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2021
3. स्वामी, संजय कुमार; पर्यावरण की चुनौतियाँ और भारतीय परंपरा, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2022
4. जनसत्ता समाचार पत्र, दिनाँक 12 दिसम्बर 2022